स्त्री की अपनी पहचान भी है

वीना जैन

आज की औरत अपने अधिकार पाने के लिए जी-जान से कोशिश कर रही है। ये अधिकार क्या हैं ? आत्म-सम्मान क्या है ? इन दोनों में क्या अंतर है ? आज मैं आत्म-सम्मान की बात करना चाहती हूं जिसे स्त्री खो देती है, चाहे वह कितना ही अधिकारों के लिए लड़ रही हो।

पति को या तो परमात्मा का रूप माना जाता है या पति के सम्मान से ही स्त्री का सम्मान जुड़ा माना जाता है। उन स्त्रियों को जो पति को परमात्मा मानती हैं हम यह कहना चाहती हैं कि पति व्यक्ति है, भगवान नहीं। पर शिक्षित नारी का व्यक्तित्व अभी भी पति के गौरव के चारों ओर घूमता रहता है। वह आज भी स्वयं कुछ नहीं है। पति की मृत्यु के बाद वह विधवा कहलाती है और इस शब्द के साथ लोगों की सहानुभूति चाहती है। समाज में पति के नाम के साथ 'उसकी विधवा' शब्द जोड़कर वह अपना परिचय देती है। क्या उसका अपना कुछ नहीं ? क्या पति के बाद वह सिर्फ उसकी विधवा रह जाती है, पत्नी नहीं ? लगता है असहाय कहलाना उसकी आदत बन गई है। उसे शौक है कि लोग उसे दया से देखें।

दुनिया के भीड़-भड़क्के में कितनी खुशी से जीवन बीत रहा था। जीवन के अंधेरे की ओर ध्यान तक नहीं गया था, उसे सोचने का समय ही नहीं था। पति-पत्नी दोनों अपने कामों में व्यस्त थे, पर एक दूसरे से जुड़े हुए। काल की एक ही चपेट में दोनों अलग हो गए, पर क्या ऐसा जीवन बिताने के बाद स्त्री अपने पति का नाम जीवित नहीं रखना चाहेगी ? जिसने पति के साथ गौरवपूर्ण जीवन बिताया हो, क्या एक ही क्षण में वह बेचारी हो जाए। क्यों ? वह अपनी उन सुनहरी यादों को सहारा बनाकर जीवन गौरवपूर्ण बिता सके यह तभी संभव है जब वह दुनिया के सामने अपने को लाचार व बेसहारा न समझे। वह अपने पति के नाम को अपने साथ जोड़कर निखार सकती है।

समाज उसे तिल-तिल कर क्यों मारना चाहता है ? उसकी सब खुशियों पर—खाने पर, पहनने-ओढ़ने पर बंधन लगाए जाते हैं। क्यों उसके सब अधिकार ले लिए जाते हैं ? क्यों उसे अभागा माना जाता है ? क्या ये बंधन पुरुष पर भी लगाए जाते हैं जिसकी पत्नी मर जाती है ? क्या वह भी अभागा है ? नहीं। पति के बाद जब वह अधिकार की मांग करती है तो उसे ऐसे देखा जाता है मानो वह कुछ नाजायज मांग कर रही है। यह अन्य किसी का दोष नहीं स्वयं स्त्री का है। आज भी वह उसी जगह खड़ी है जहां हजारों साल पहले थी।
उसे स्वयं समझना और बदलना होगा। □

अनुवादिका : वीणा शिवपुरी